© 2019 IJSRSET | Volume 6 | Issue 2 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099
Themed Section : Engineering and Technology

मानव जीवन के प्रेरणास्रोत श्रीराम

डॉ0 देवनारायण पाठक
शोध–निर्देशक
विभागाध्यक्ष, संस्कृत विभाग
नेहरू ग्राम भारती (मानित वि0वि0),
इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)

संगीता सिंह
शोधच्छात्रा
संस्कृत विभाग
नेहरू ग्राम भारती (मानित वि0वि0),
इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)

वाल्मीकि की रामायण श्रीराम को उत्कृष्ट पुरुष और धीरोदात्त नायक के रूप में प्रस्थापित करती है, जो मर्यादा पुरुषोत्तम है, इसलिये अनुकरणीय है न कि वे स्वयं भगवान् है। रामचरितमानस और वाल्मीकि रामायण में अंतर इनके शीर्षक में निहित है। रामचरितमानस जहाँ राम का चरित है वहीं रामायण का सन्धि–विच्छेद है। राम अयन अर्थात् राम की यात्रा रामायण, राम की जीवन–यात्रा का वृत्तान्त है इसलिये इस यात्रा में एक पुरुषोत्तम नायक की जीवन के प्रति जिजीविषा भी है और साध्य की तार्किकता, पवित्रता, नैतिकता और शुचिता के साथ–साथ साध्य को पाने के लिये अपनाये गये साधनों की भी, नैतिक के प्रति प्रबल आग्रह है। वाल्मीकि रामायण की कथावस्तु के मुख्य पात्र एवं कथा नायक श्रीराम का चरित्र भारतीय संस्कृति एवं परम्परा का एक आदर्श चरित्र है। आज के युग में राम का क्या स्थान है जब क्यों उन्हें अद्वितीय मानते हैं। मनुष्य के रूप में, पति के रूप में, मित्र के रूप में, शान्ति एवं युद्ध के समय सहायक मित्र के रूप में, एक शासक के रूप में, इस बात को प्रमाणित करने के लिये इस तथ्य से अधिक और किसी साक्ष्य की आवश्यकता नहीं कि जब श्रीराम केवल 25 या 26 वर्ष के रहें होंगे उस समय न तो उनके पास शासन करने के लिये राज्य की सुविधा थी न जागीर बाँटने के लिये भू–सम्पत्ति थी, न कोई राजकीय सम्मान, न दान देने के लिये धन–सम्पत्ति। इन सब साधनों के अभाव में भी इतना अल्पायु में उन्होंने अपने को उस युग के शीर्ष गौरव के रूप में प्रमाणित किया। श्रीराम के सम्पर्क में जो आता था वह बिना प्रभावित हुए नहीं रह पाया चाहे वह योद्धा हो या सामान्य जन, चाहे वह छोटा हो या बड़ा, साधु सन्त हो या ऋषि मुनि हो। श्री राम अपने भाईयों के लगभग आयु के समकक्ष थे किन्तु उनसे उच्च चरित्र की दृष्टि में बहुत आगे थे–

तेषामपि महातेजा रामो रतिकरः पितुः
स्वयम्भूरिव भूतानां बभूव गुणवत्तरः।।[1]

परन्तु उनमें भी महातेजस्वी श्रीराम सबकी अपेक्षा अधिक गुणवान् होने के कारण समस्त प्राणियों के लिये ब्रह्मा जी की भाँति पिता के लिये विशेष प्रीतिवर्धक थे। श्रीराम का चरित्र और कथाफलक में उनकी

भूमिका किसी भी मानव में निहित सद्गुणों की उच्चतम एवं सर्वोत्कृष्ट प्रतिमान है और इसी दृष्टि से वे मानव मात्र से उठकर देवत्व के पद पर स्थापित हो जाते हैं–

स हि देवैरुदीणेस्य रावणस्य वधार्तिभिः।

अर्थितो मानुषे लोके जज्ञे विष्णु सनातनः।।

इसका एक कारण और भी था– वे साक्षात् सनातन विष्णु थे और परम प्रचण्ड रावण के वध की अभिलाषा रखने वाले देवताओं की प्रार्थना पर मनुष्यलोक में अवतीर्ण हुए थे।

यह पूरी की पूरी सभ्यता और संस्कृति के उद्धार के लिये अपने जीवन का स्वर्णिम समय खपा देने वाला चरित्र, सामान्य जन के लिये वैसे भी अति मानवीय स्वरूप धारण कर ही लेता है और अपने जीवन मूल्यों, आदर्शों तथा सद्गुणों से वह ईश्वरत्व या देवत्व की पदवी जनमानस में प्राप्त कर लेता है। मनुष्यों के मस्तिष्क में ईश्वर का स्थान ग्रहण करने के लिये आवश्यक नहीं है कि वह चरित्र जन्मना ही ईश्वर या उसका अवतार हो वस्तुतः श्रीराम का चरित्र अपनी संस्थापनाओं में, रावण की रक्ष संस्कृति के अत्याचारों से त्रस्त आर्य संस्कृति के पुनरुद्धार अभियान के शक्तिशाली प्रणेता और नेतृत्व के कारण ही सबसे प्रभावशाली और सशक्त चरित्र है। इतिहास के इतर, महाकाव्यों, गाथाओं, ग्रन्थों और पौराणिक साहित्य में कोई अन्य चरित्र इतना सर्वव्यापी और हृदय से स्वीकार्य नहीं हुआ जितना कि श्रीराम का चरित्र ग्राह्य हुआ है–

स च सर्वगुणोपेतः कौसल्यानन्दवर्धनः।

समुद्र इव गाम्भीर्ये धैर्येण हिमवानिव।।[2]

श्रीराम सर्वगुण सम्पन्न अपनी माता कौसल्या के आनन्द बढ़ाने वाले, गम्भीरता में समुद्र और धैर्य में हिमालय के समान हैं।

श्रीराम जन्मा महान आत्मा है, जो युवा होकर अपनी जीवन शैली और नैतिक मूल्यों के आलोक में पुरुषों में उत्तम, पुरुषोत्तम पद धारण करते हैं। महर्षि वाल्मीकि, श्रीराम के बारें में लिखते हैं कि सोलह वर्ष की आयु से भी कम अवस्था में महर्षि विश्वामित्र द्वारा मारीच और सुबाहु के हाथों ऋषियों के यज्ञ ध्वंज की रक्षा हेतु श्रीराम को साथ भेजने की याचना की थी–

दृढ़भक्तिः स्थिरप्रजो नासद्ग्राही न दुर्वचः।

निस्तन्द्रीप्रमत्तश्च स्वदोषपरदोषवित्।।[3]

गुरुजनों के प्रति उनकी दृढ़भक्ति थी, वे स्थितप्रज्ञ और असद्वस्तुओं को कभी ग्रहण नहीं करते थे, उनके मुख से कभी दुर्वचन नहीं निकलता था, आलस्य–रहित, प्रमाद शून्य तथा अपने और पराये मनुष्यों के दोषों को अच्छी प्रकार जानने वाले थे।

श्रीराम का चरित्र, समाज को एक सन्देश देता है कि वचनबद्धता एक शाश्वत मूल्य है जो हर युग में एक आदर्श मनोभाव है। किसी भी व्यक्ति का व्यक्तित्व तभी सम्पूर्ण और समाज में स्वीकार्य होता है जब वह अपने वचनों पर स्थिर रहे, चाहे इसके लिए अपने प्राणों की आहूति क्यों न देनी पड़े।

वह युग–पुरुष श्रीराम कितने महान व श्रेष्ठ है कि जब विभीषण श्रीराम की शरण में आये तो श्रीराम ने पूरी युद्ध–परिषद की एक बैठक बुलाई जिसमें हनुमान को छोड़कर, सभी लोग यहाँ तक स्वयं उनके भाई लक्ष्मण इस पक्ष में थे कि विभीषण की याचना को अस्वीकार कर दें बल्कि युद्ध परिषद में एक दो लोग तो च ाहते थे कि विभीषण को मरवा दे श्रीराम बिल्कुल अकेले, सबके परामर्श के बावजूद सभी के मतों को अस्वीकार करते हुए श्रीराम बोले–

मित्रभावेन सम्प्राप्तं न त्यजेयं कथंचन्।

दोषो यद्यपि तस्य स्यात् सतायेतद् गर्हितम्।।[4]

जो मित्रभाव से मेरे पास आ गया हो उसे मैं किसी तरह त्याग नहीं सकता सम्भव है उसमें कुछ दोष भी हो परन्तु दोषी को आश्रय देना भी सत्पुरुषों के लिये निन्दित नहीं है। अतः विभीषण को मैं अवश्य अपनाऊँगा। यही बात रामचरितमानस में श्रीतुलसीदास जी ने सुन्दरकाण्ड में लिखा है–

सरनागत कहुँ जे तजहि निज अनहित अनुमानि

जे नर पावँर पापमय निन्ह हि बिलोकत हानि।।[5]

जो मनुष्य अपने अहित का अनुमान करके शरण में आये हुए का त्याग कर देते हैं वे पायर (क्षुद्र) है, पापमय है, उन्हें देखने में भी हानि (पाप लगता) है।

निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा।[6]

तुलसीदास जी लिखते हैं कि श्रीराम स्वयं कहते हैं कि जो मनुष्य निर्मल मन का होता है, वही मुझे पाता है। मुझे कपट और छल छिद्र नहीं सुहाते यदि उसे रावण ने भेद लेने को भेजा है, तब भी हे सुग्रीव! अपने को कुछ भी भय या हानि नही है।

श्रीराम को अपनी नैतिक शक्ति का कितना महान बोध था जब उन्होंने इन उच्च भावनाओं को व्यक्त किया और उन्हें कार्यान्वित किये बिना किसी शर्त या प्रतिबन्ध के।

यदि शरण में आया हुआ पुरुष संरक्षण न पाकर उस रक्षक के देखते– देखते नष्ट हो जाय तो वह उसके सारे पुण्य को अपने साथ ले जाता है और शरणागत की रक्षा न करने से मनुष्य के बल व वीर्य का नाश होता है। इसी प्रकार लंकाकाण्ड का एक प्रसंग है– जबकि रावण वध के पश्चात्, राम व विभीषण की बातचीत, विभीषण के मन में रावण के प्रति दो भावनाओं में संघर्ष तथा अश्रुपूरित धारा देखकर श्रीराम विभीषण से कहते हैं–

मरणान्तानि वैराणि निवृत्त नः प्रयोजनम्।

क्रियतामस्य संस्कारो ममाप्येषा यथा तव।।7

विभीषण! वैर जीवन काल तक ही रहता है। मरने के बाद उस वैर का अन्त हो जाता है। अब हमारा प्रयोजन सिद्ध हो चुका है। अतः अब तुम इसका संस्कार करो। इस समय यह जैसे तुम्हारे स्नेह का पात्र है, उसी तरह मेरा भी स्नेह भाजन है।

इस प्रकार कुशल रणर्नातिकार की भाँति राम ने लंका तक पहुँचने के लिये विशेषज्ञों की सहायता से सेतुबंध, व्यूहरचना, विभीषण से सन्धि, शत्रु के मनोबल को तोड़ने की नीतियाँ प्रत्येक चरण में राम का चरित्र एक कुशल नेतृत्वकर्ता के रूप में उभर कर आता है।

उपरोक्त के आलोक में यह कहना समीचीन होगा कि रामायण में राम का चरित्र सर्व सद्गुणों से परिपूर्ण है। वे वचनबद्धता, वीरता, शौर्य, पराक्रम, रणकौशल के धनी है तो एक संवेदनशील और भावुक मनुष्य के रूप में अपने प्रियजनों पत्नी, भ्राताओं और सहयोगियों के प्रति पूर्ण सहिष्णु एवं विनम्र है। वे तत्कालीन प्रबुद्ध वर्ग, ऋषि–मुनियों का समुचित आदर करते हैं और उनके चरित्र में वास्तविक मनुष्यत्व के सभी सद्गुण विद्यमान है वे अगर अत्यन्त सामान्य मनुष्य की भाँति अधीर दुःखी विह्वल हताश होते है तो एक धीर गम्भीर विराट व्यक्तित्वकर्ता की भाँति अडिग और दृढ़ कल्पित भी है।

सामान्यतया श्रीराम क्रोध के वशीभूत नहीं होते किन्तु नीति और न्याय के हित में उनका क्रोध प्रज्ज्वलित भी होता है। इन अर्थों में श्रीराम का चरित्र उनके व्यक्तित्व में निहित सर्वोच्च मानवीय सद्गुणों के आलोक में वैश्विक स्तर पर एक आदर्श प्रतिमान के रूप में स्थापित है। अगणित वर्षों से सभ्यताओं और समाज, श्रीराम के व्यक्तित्व और कृतित्व से प्रेरणा पाते रहे हैं और वर्तमान युग में भी उनके चरित्र की प्रासंगिकता जीवन के हर क्षेत्र में रूढ़ है। एक व्यक्ति की जीवन यात्रा में क्षण प्रतिक्षण दुविधाओं और असमंजस्य की स्थितियों के उत्पन्न होने पर उनके समाधान की दिशा में एक आदर्श उदाहरण के रूप में श्रीराम सदैव प्रासंगिक है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. वाल्मीकिरामायण, 2/1/6
2. वाल्मीकिरामायण, 1/1/17
3. वाल्मीकिरामायण, 1/1/24
4. वाल्मीकिरामायण, 6/18/3
5. रामचरितमानस, 5/43 दोहा
6. रामचरितमानस, 5/43/5
7. वाल्मीकिरामायण, 6/109/25